दलित जातियों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

अनिल कुमार*

प्राचीनकाल, पूर्व वैदिक काल, मध्यकाल और वर्तमान में दलित नारी की समाज में कम स्थिति रही है, उसे कम अधिकार प्राप्त थे और वे कौन से कारण रहे जिसके चलते ज्योतिबा फुले दंपत्ति को नारी की दासता से मुक्ति दिलाने हेतु आंदोलन चलाने की आवश्यकता पड़ी, ईसापूर्व 1200 के आस-पास मातृ सत्तात्मक और स्त्री सत्ता प्रमुख होने के बावजूद आर्यों से हारे अनार्यो को दास व उनकी पत्नियों को दासी बनाना शुरु हुआ, उन कारणों का खुलासा व आज समाज में दलित नारी की जो स्थिति है, उसमें महामना ज्योतिबा फुले का योगदान कम नहीं है तथा आजादी के बाद पांच दशकों में वर्तमान में दलित महिलाओं के शोषण और मुक्ति की दिशा में मनुवादी पुरुष की मानसिकता बदलने और उसमें नैतिकता जगाने हेतु समयबद्ध कार्यक्रम की आवश्यकता है। वैदिक युग से (पूर्व) दलित वर्ग की कुंवारी कन्याओं को शिक्षा तथा ज्ञान की विभिन्न शाखाओं का अध्ययन करने के लिए समान अवसर उपलब्ध करवाए जाते थे। विधवाओं के साथ भी परिवार में सम्मानजनक व्यवहार होता था। पति को पत्नी का और पत्नी को पति का मित्र माना जाता था। पारिवारिक उत्सवों एवं कार्यक्रमों में महिला की भूमिका अहम होती थी। साररूप में कहा जाए तो पूर्व वैदिक काल में दलित नारी की स्थिति सर्वश्रेष्ठ थी। धार्मिक कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए 'युगल' शब्द का प्रयोग किया जाता था। ऐसे आयोजनों में दोनों एक साथ होकर वृक्षों की पूजा करते थे। प्रकृति को अर्घ देना, पूर्वजों के लिए पानी छोड़ना तथा सूर्य को जल चढ़ाने का कार्य किया जाता था। बच्चों के जन्म पर बधाई देना, बड़े होने पर पाणिग्रहण करवाना, धान्यों की पूजा करवाना आदि प्रमुख धार्मिक कार्य थे, जिनमें दलित महिलाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान होता था। बाल-विवाह नहीं होते थे। पर्दा प्रथा नहीं थी। विदुषी महिलाएं जनपदीय दरबारों में भी जाती थीं। खेमा, सुभद्रा, जातक, अमरा, ज्योति, सुमेधा, अनुपमा आदि ऐसी प्रसिद्ध विदुषी महिलाएँ थी।

पूर्व वैदिक काल में राज्य का स्वरूप जनजातीय था।[1] इसलिए दलित महिलाओं का राजनैतिक अतीत भी सुनहरा था। पूर्व वैदिक काल में अनेक जनपद ऐसे थे जिनमें महिलाओं के नाम पर राज्य थे, जैसे संपा, काशी कौशांबी, वैशाली,

***शोध-छात्र इतिहास विभाग जय प्रकाश विश्वविद्यालय छपरा (बिहार)**

गांधार, वज्जल, महिष्मति, शिवी, मद्री आदि । स्त्री व पुरुष दोनों ही सिर पर पगड़ी पहनते थे। बाल लंबे और कंधी से सुसज्जित होते थे। स्त्रियां वेणियां धारण करती थी। सिकंदर के समय में दलित स्त्रियां अपने हारे हुए कुटुंबियों के हथियार उठाकर पुरुषों के साथ देश के शत्रुओं के विरुद्ध लड़ती थीं।[2] जंबूदीप में अनेक राज्यों व नगरों की स्थापना दलित महिलाओं द्वारा की गई थी, जिनका वृतांत हमें 'पंचतंत्र' नामक पुस्तक में प्राप्त होता है। इसके रचयिता पंडित विष्णु शर्मा अनेक कथाओं को प्रारंभ करने से पूर्व 'महिला रोप्य नामक नगरम् अस्ति' कहते हुए पाये जाते हैं। दलित नारी अपनी उन्तावस्था में थी वह चतुराई के साथ ही साथ दयावान, विनम्र सत्यप्रिय थी। वह अतीत काल की समाज की बनावट एवं बुनावट की प्रमुख सूत्रधार हुआ करती थी।

मैक्समूलर के अनुसार ई.पू. 1200 के आस-पास एशिया मायनर से जब आर्यों का प्रवेश भारत में हुआ, तब यहां पर मातृ सत्ता विद्यमान थी और मातृ देवी पूजा का प्रचलन था, जो संसार की सबसे पुरानी जातियों में ही देखी जाती है। ऐसी पूजा मातृसत्तात्मक राज्यों में ही प्रचलित थी। उस काल में बंदी या दास बनाने का चलन नहीं था, न न्यायालय थे न जेले थीं। अतएव जन या कबीले अपने आपसी झगड़ों का फैसला स्वयं अपनी जन-पंचायतों अथवा कबीला प्रमुख माता के समक्ष उपस्थित होकर करवा लिया करते थे। लीविस मोर्गन ने अपनी पुस्तक 'प्राचीन समाज' (1877 ईसवी) में स्त्री सत्ता के वैज्ञानिक प्रमाण प्रस्तुत किए है। हड़प्पा और मोहन जोदड़ों की खुदाई में मिली वस्तुओं से दलितों के धार्मिक सूत्रों का पता लगता है। ''घरों में बहुत संख्या में मिली स्त्री आकृतियों तथा स्त्री मूर्तियों से यह अनुमान लगता है कि वे लोग देवी माता को पूजते रहे होंगे।[3] आर्यों के आगमन के साथ ही विषमता ने इस देश में पदार्पण किया। उत्तर वैदिक काल में आते-आते दलित महिलाओं की दशा में बहुत परिवर्तन हो चुका था।

देवासुर संग्रामों के कारण आर्यों से हारे हुए अनार्य लोगों की पत्नियों को भी दास बनाना प्रारंभ कर दिया गया था। वृहदारण्यकोपनिषद में वर्णन आया है कि ''जिसके पास जितने अधिक दास-दासी होते थे, वह उतना ही अधिक संपन्न माना जाने लगा था।'' इसी उपनिषद के VI-2-7 में श्वेतकेतु का पिता आरूणि कहता है कि ''उसके पास सोना, चांदी, पशुधन, घोड़े, दासियां तथा कपड़े हैं। ऋग्वेदिक काल में घरों में शूद्र दासियों को रखने की परंपरा प्रारंभ हो चुकी थी।[4] उत्तर वैदिक काल में स्त्रियों की दशा में भी बहुत परिवर्तन हो चुका था। आर्यों ने ऐसी प्रक्रिया प्रारंभ कर दी थी, जिसके अनुसार स्त्रियों के समूहों को आगे चलकर शूद्रों की कोटि में पटक दिया गया और सभी सामाजिक अधिकारों से उन्हें वंचित करके दासों तथा पशुओं की अवस्था में पहुंचा दिया। किंतु दलित नारी को अतीत के जो अधिकार थे, वे वर्तमान अथवा भविष्य की गारंटी नहीं थे। उसके अधिकारों पर प्रहार तो प्रारंभ हो ही चुके

थे। फिर भी वह इतनी अबला नहीं बनी थी जितनी सामंतवादी युग (उत्तर मध्यकाल) में बना दी गई थी।

दलित महिला की शिक्षा व आर्थिक स्वतंत्रता छीन ली गई। इसलिए वह दासता की जंजीर में जकड़ी गई।[5] हिंदूइज्म: धर्म का कलंक? नामक पुस्तक के पृष्ठ 124 पर यह वर्णन आया है–

''मनु, बुद्ध के बाद पैदा हुआ। उसने ब्राह्मणवाद को फिर से जीवित किया। क्योंकि वह (ब्राह्मणवाद) बुद्ध धर्म के तर्कवाद, सामाजिक समता तथा सदाचार के सामने दम तोड़ चुका था। शूद्र और स्त्रियां दोनों ही वर्ग बुद्ध धर्म की ओर खिंचे चले जा रहे थे। मनु ने उन दोनों को उस तरफ से रोकने का यत्न किया। यही कारण है कि जो कानून उसने बनाए, वे शूद्र तथा स्त्री दोनों की दासता और पतन के कारण बने।''

मनु स्मृति के कानूनों द्वारा दासी बनाई गई दलित महिलाओं की सुंदर कन्याओं को भोग्या के रूप में पुन: प्राप्त करने के लिए ब्राह्मणों ने एक नवीन प्रकार का षड्यंत्र रचा और उन सुंदर दलित कन्याओं को मंदिर में भगवान की मूर्ति के साथ शादी करने के बहाने देवदासी के रूप में दान करवाया जाने लगा। माता-पिता के मन में परिवार के कल्याण की भ्रांति पैदा करने दान में ली गई ऐसी लाखों देवदासियां देश में आज भी विद्यमान है, जो मंदिर में आनेवाले मठाधीशों, मंडलेश्वरों और साधु सन्यासियों को सहज ही उपलब्ध होने लगीं। महाराष्ट्र व कर्नाटक तो देवदासियों के तीर्थस्थल हैं। भारत वर्ष के मध्यकालीन इतिहास में साक्ष्य मिलता है कि उस काल में भी महिलाएं बड़ी बहादुरी से अपने पति व पुत्रों के साथ युद्ध के मैदान में जाती थी। क्लाड़देवी स्ट्रास ने अपने निबंध कुटुंब में मानव संस्कृति तथा समाज पृष्ठ 275 लिखा है कि उत्तर वैदिक काल में मुखिया की रखैलें भी युद्ध अभियानों में भाग लेना पसंद करती थीं। किंतु ऐसी अनेक आदिम जातियां थीं जिनमें अर्ध सहायिका जाति की एक वर्ग विशेष की नारियां विवाह नहीं करती थीं, वरन वे पुरूषों के साथ युद्धों में भाग लेती थीं। ठीक यही स्थिति भारत के मूलनिवासियों में भी थी। ये स्त्रियां भी केवल संतानोत्पति के समय ही घरों में रहकर पति की निर्भरता प्राप्त करती थी। शेष समय में वे स्वयं कार्य करती थी। एक स्थान पर वर्णन आया है कि 'बोरोरी' जाति की नारियां स्वयं ही अपने खेत भी जोतती थीं। दलित नारी के युद्ध में हारने पर उसे काबू में करने के लिए उसको हथकड़ी, बेड़ी तथा नाक में नकेल भी डाली गई। वे बेड़ियां ही वर्तमान की नारी के (पांव में) कड़ी व बिछिया, पायजेब, नाक में नथनी व हाथ में चूड़ी आदि के रूप में पाई जाती हैं। अंतर इतना ही है कि आज उसका स्वरूप बदल गया है तथा धातु में परिवर्तन कर दिया गया है। नारी को अपने बस में रखने के लिए प्रारंभ में आर्यों ने उसे खूंटे से भी बांधा था, ऐसे उल्लेख मिलते हैं। जिस प्रकार एक गाय को कुछ दिनों तक एक निर्धारित स्थान पर बांधने के पश्चात

उसे उस स्थान पर बंधने की स्वत: उसकी आदत बन जाती है, उसी प्रकार कालांतर में दलित नारी ने पुरुषों की अधीनता स्वीकार कर ली। वह अपने लिए आर्यों द्वारा निर्धारित गतिविधियों से संचालित होने लगी।

काव्यकाल में तो युद्धबंदियों को (वीभत्य तरीकों से) उनकी आंखों के सामने कत्ल किया जाने लगा था। ऐसी वहशी अवस्था को देखकर उनकी जबान तक बंद हो गई, वे मुंह तक नहीं खोल सकती थीं। काव्यकाल में दास-दासियों की मंडी में दासियों की चमड़ी को खींच-खींच कर देखना, दांतों को देखने के लिए जबड़ों को फाड़ा तक गया। सिर को ठोंककर देखने व बालों की मजबूती को परखने के लिए उनके सिर के बार खींचने जैसी अमानवीय यातनाएं दी जाती थीं आगे चलकर मनु ने दास स्त्रियों और देवासुर संग्रामों में हार कर पहाड़ियों की आड़ मे छिपने वाले व जंगलों की दुर्गम तराइयों में बस जाने वाले मूल निवासियों को निम्न श्रेणी में धकेलकर उन्हें अछूत, अंत्यज व अस्पृश्य घोषित किया। उनके लिए पृथक से एक संविधान की रचना की। उस नियमावली के अनुसार ही ऐसे योद्धाओं को जीवन-यापन करने हेतु बाध्य किया गया।

इस सामाजिक यात्रा में अपने शाश्वत जीवन मूल्यों की धरोहर को समेटे हुए आज भी दलित नारी मजबूरी में दासी बनकर जी रही है। सामंतयुगीन तथा काव्यकालीन पीड़ादायक यातनाओं के झेलकर दलित नारी मौन की संस्कृति में जकड़ गई। आर्यों में उसकी शिक्षा पर पाबंदी लगा दी थी। धर्म के पाखंडी चोले को तैयार करके दलित नारी को भाग्यवाद, रूढ़िवाद, पूर्वजन्म तथा अंधविश्वास को उत्पन्न करने वाले तौर-तरीके तैयार करके उसमें उलझा दिया गया। उसके साथियों-मार्गदर्शकों को षड्यंत्रपूर्वक मार डाला गया था। आपस में फूट डालकर संगठन शक्ति को तोड़ दिया गया था।

भारतीय समाज में अनुसूचित जाति की नारियों की स्थिति के बारे में, आदिकाल से आधुनिक काल तक के नारी जीवन का गहन अध्ययन करने के उपरांत यही निष्कर्ष निकलता है कि भारत में अनुसूचित जाति की नारी के बारे में ही नहीं, बल्कि सभी जातियों की नारियों की वैदिक काल में स्थिति काफी अच्छी नहीं थी। वैदिक काल में भी नारी की स्थिति में उतार-चढ़ाव आया और नारी के अधिकार समाप्त करते दिखाई देते हैं। ऋग्वेद में नारी के मनोरंजन कारी और भोग्या रूप का भी वर्णन हैं तथा नियोग प्रथा को भी एक पवित्र कार्य माना गया है।[6] नियोग प्रथा का अर्थ है- यदि पति संतान पैदा करने में असमर्थ हो तो ऐसी स्थिति में वह अपनी पत्नी को आज्ञा देकर वह दूसरे पुरूष से संतान पैदा करवा सकता है। मनुस्मृति और ऋग्वेद के अनुसार नियोग एक पवित्र कार्य है, यह एक ऐसी धर्माज्ञा है, जिससे स्त्रियों का सतीत्व सुरक्षित न रह सका। यह ब्राह्मणों, ऋषियों की एक कूटनीतिक चाल थी और उन्होंने अय्याशी करने का मार्ग खोल लिया।[7]

वर्तमान काल का प्रारंभ सन् 1900 ईसवी में हुआ। इसके बाद नारी ने पुरूषों को अनेक कामों में सहयोग देना प्रारंभ कर दिया। परंतु दुख का विषय है कि इसके बाद नारी स्वयं कुछ भटक गई। नारी शिक्षा का प्रभाव बढ़ा, तब पुरुषों ने उसे फैशन के ताने बाने में उलझ जाने योग्य वातावरण सुलभ कराना प्रारंभ कर दिया। फलतः जहां एक ओर नारी ने स्वावलंबी बनने का प्रयास किया, वहीं दूसरी ओर वह फैशन के ताने बाने में उलझ कर रह गई, और इसीलिए उसे पुरुष की सहायता लेने के लिए विवश होना पड़ा। आज भी नारी को पिता, पति तथा पुत्र के नियंत्रण में रखा जाता है जबकि नारी घर के विभिन्न कार्यों में व्यस्त रहते हुए अपने परिवार का पालन पोषण करती है।

अतीत में शूद्रों-महिलाओं के पढ़ने पर रोक थी। महिलाओं-शूद्रों पर ही नहीं क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, महिलाओं आदि के विद्या अध्ययन पर रोक थी। ऋग्वेद, अथर्ववेद, सामवेद में कोई भी ऋषि क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र एवं महिला नहीं है। सारे मंत्रों के रचयिता ब्राह्मण ही हैं। उस समय ब्राह्मणों को ही पढ़ने-लिखने का अधिकार था। आज की भौतिकवादी दुनिया में अतीत का शिक्षा जगत बिलकुल मान्य नहीं है। आज हम यदि कहें कि पूरे देश में केवल ब्राह्मण ही विद्या अध्ययन कर सकते हैं, बाकी क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, महिलाएँ शिक्षा अध्ययन नहीं कर सकती तो पूरे देश में तूफान खड़ा हो जाएगा। सीता, द्रौपदी, उत्तरा, गार्गी, मैत्रेयी किस स्कूल में पढ़ती थी? वास्तव में उपरोक्त सभी महिलाएँ अशिक्षित थीं। महाभारत की द्रोपदी, रामायण की सीता, बुद्ध काल की आम्रपाली, सभी महिलाएं सर्वहारा थी, सभी महिलाएं अशिक्षित थीं इसीलिए समाज के इतने बड़े अत्याचार उन्हें सहने पड़े।[8] ज्योतिराव फुले का कहना था कि, स्त्री निःसंदेह पुरुष से श्रेष्ठ है क्योंकि वह बिना किसी शिकायत के लगातार नौ मास का बोझ संभालती है। वही सबकी जन्मदात्री है, वही मलमूत्र साफ करके सबका लालन-पालन करती है। जब बालक पंगु व लाचार होता है, तब वही उसे सहारा देती है और चलना, फिरना व बोलना सिखाती है। सभी ऋणों से मानव उऋण हो सकता है, किंतु जन्मदात्री माता के ऋण से वह कभी भी मुक्त नहीं हो सकता है।

आज भारत ने 21वीं सदी में पांव रख दिए हैं। आजादी के बाद के बीते इन 70 वर्षों में भारत के तथाकथित महान् हिंदू धर्म में दलित महिला उत्पीड़न के लाखों आंकड़े सामने आए हैं, जो राजनीतिज्ञों, अर्थशास्त्रियों, धार्मिक और समाज के ठेकेदारों तथा समाजशास्त्रियों को मुंह चिढ़ाते हुए दिखाई देते हैं, क्योंकि 75 प्रतिशत महिलाओं को तो, आजादी के आयामों तथा प्रगति के फलसफों की हवा से वंचित रखा गया है। इस परिधि में प्रत्येक स्तर पर दलित महिलाओं का शोषण हुआ है। मध्य प्रदेश के मालवा निमाड़ क्षेत्र की दलित महिलाएं आजादी के 70 वर्षों के दरम्यान लगातार बलात्कार, हत्या, अपहरण आदि की सर्वाधिक शिकार हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में अंध

विश्वास के कारण कहीं वृद्ध दलित महिलाएं डायन घोषित करने के बाद निर्वस्त्र करके सरेआम घसीट-घसीट कर घुमाई गई है, तो कहीं आजादी की स्वर्ण जयंती 15 अगस्त, 1997 के अवसर पर दलित पंच तथा सरपंच महिलाओं को चीरहरण की शर्मिंदगी से दो-चार होना पड़ा है। दलित महिला को शोषण के दलदल से निकालकर उसको उसके अस्तित्व की पहचान करवाकर न्याय प्रदान करने, कराने में किसी की रुचि नहीं है। उसके दर्द, उसकी पीड़ा, उसके आत्मसम्मान रहित आत्मा के आहत स्वर तथा उसकी दुरावस्था को समझकर उसके भविष्य को उज्जवल बनाने का बीड़ा उठाने में सर्वोच्च महामना ज्योतिराव फुले तथा उनके बाद दूसरे बाबा साहेब आंबेडकर शत-शत अभिनंदन के अधिकारी है। कई शताब्दियों के पश्चात पुरुष प्रधान समाज से नारी को मुक्त करवाने वाले महात्मा फुले दंपत्ति ने ब्रिटिश शासन काल में उन्हें अज्ञान के अंधकार से बाहर निकालकर 19वीं सदी (सन् 1848) में शिक्षा की सीढ़ी पर उंगली पकड़कर चढ़ाया।

संदर्भ सूचीः

1. राहुल सांकृत्यायन, मानव समाज, दिल्ली, 1999, पृ॰-19.
2. वही, पृ॰-63.
3. ओ॰पी॰ जग्गी, प्राचीन भारत की वैज्ञानिक उपलब्धियाँ, 1976, पृ॰-3.
4. नवल वियोगी, सिंधुघाटी सभ्यता के सृजनकर्ता, 1998, पृ॰-221.
5. सांस्कृत्यायन, पूर्वोक्त, पृ॰-203.
6. सबलोक शोभा, वेदों में नारी, सरिता, दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली, 1980 से उद्धृरित.
7. बौद्ध गजाधर प्रसाद, आर्यनीति का भंडाफोड़, भारतीय बौद्ध महासभा, दिल्ली, 2000, पृ॰-18.
8. आचार्य रोहित, नारी और शिक्षा, दलित साहित्य प्रकाशन संस्था, नई दिल्ली, 2010, पृ॰-25-26.

****